अध्याय - 7

प्रत्यावर्ती धारा

प्रतिरोधक पर प्रयुक्त ac वोल्टता :-

जब प्रत्यावर्ती धारा परिपथ में केवल प्रतिरोध R होता है तब प्रत्यावर्ती धारा परिपथ में प्रत्यावर्ती वोल्टता तथा प्रत्यावर्ती धारा दोनों समान कला में होते हैं।

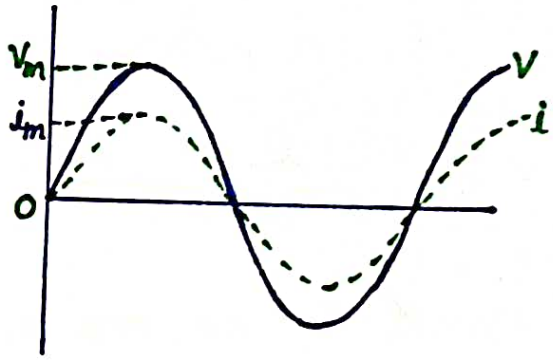

यदि प्रत्यावर्ती धारा - परिपथ में धारा i, वोल्टेज V हो तब प्रत्यावर्ती धारा तथा प्रत्यावर्ती वोल्टता के समीकरण निम्न प्राप्त होते हैं।

प्रत्यावर्ती वोल्टता $V = V_m \sin\omega t$

प्रत्यावर्ती धारा $i = i_m \sin\omega t$

अर्थात् प्रत्यावर्ती वोल्टता तथा प्रत्यावर्ती धारा दोनों साथ-साथ न्यूनतम तथा ~~अधिकतम~~ अधिकतम मान प्राप्त करेंगी। इससे स्पष्ट होता है कि वोल्टता एवं धारा एक दूसरे के साथ समान कला में है। जहाँ ω कोणीय आवृत्ति है।

ओम के नियम से,

$$V = iR$$

$V = V_m \sin\omega t$ में V का मान रखने पर

$$iR = V_m \sin\omega t$$

उपरोक्त समीकरण में $i = i_m \sin\omega t$ रखने पर,

$$i_m \sin\omega t \cdot R = V_m \sin\omega t$$

या,

$$\boxed{V_m = i_m R}$$

यही समीकरण ओम का नियम है।

प्रतिरोध प्रत्यावर्ती धारा (AC) तथा दिष्ट धारा (DC) दोनों प्रकार की वोल्टताओं के लिए समान रूप से लागू होता है। अर्थात् प्रतिरोध ac तथा dc दोनों में समान रूप से कार्य करता है।

ac धारा एंव वोल्टता का घूर्णी सदिश द्वारा निरूपण

कलासमंजक (फेजर्स) :—

किसी प्रतिरोधक में प्रवाहित होने वाली धारा तथा ac वोल्टता समान कला में रहते हैं। परन्तु प्रेरक, संधारित अथवा इनके संयोजन युक्त परिपथों में ऐसा नहीं होता है। ac परिपथ में धारा एंव वोल्टता के बीच कला संबंध दर्शाने हेतु फेजर्स का उपयोग करते है। जिसे चित्रानुसार दर्शाया गया है।

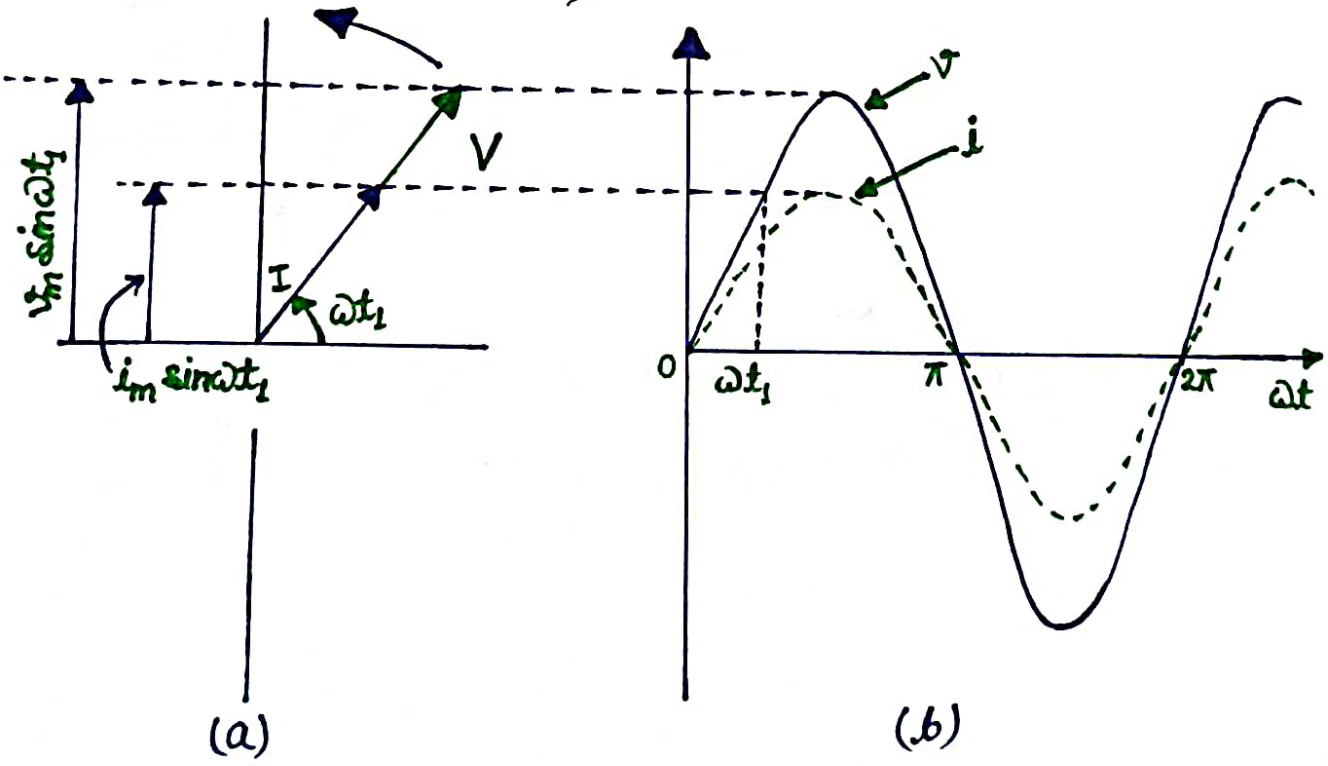

प्रेरक पर प्रयुक्त ac वोल्टता :-

जब प्रत्यावर्ती धारा परिपथ में केवल प्रेरकत्व L होता है तब परिपथ में प्रत्यावर्ती वोल्टता, प्रत्यावर्ती धारा से $\frac{\pi}{2}$ आगे रहती है। अथवा प्रत्यावर्ती धारा, प्रत्यावर्ती वोल्टता से 90° पीछे है।

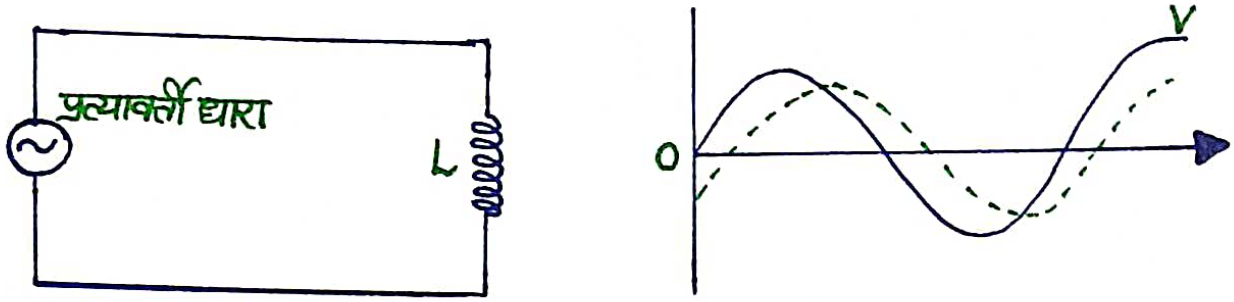

अतः प्रत्यावर्ती धारा तथा प्रत्यावर्ती वोल्टता के समीकरण,

प्रत्यावर्ती वोल्टता $V = V_m \sin(\omega t + \pi/2)$

प्रत्यावर्ती धारा $i = i_m \sin \omega t$

अथवा इस समीकरण को इस प्रकार से भी लिख सकते है।

$$V = V_m \sin \omega t$$

$$i = i_m \sin(\omega t - \pi/2)$$

उपयुक्त दोनों समीकरणों की तुलना करने पर,

$$i_m = \frac{V_m}{\omega L}$$

जहाँ i_m प्रत्यावर्ती धारा का शिखर मान है।

चूँकि ωL राशि प्रतिरोध के सदृश है। इसे 'प्रेरण प्रतिघात' कहते हैं। इसे X_L द्वारा भी प्रदर्शित करते है।

तब $$X_L = \omega L$$

जहाँ ω कोणीय वेग है। इसका मान $2\pi f$ होता है।

अतः $$\boxed{X_L = 2\pi f L}$$

संधारित्र पर प्रयुक्त ac वोल्टता :-

जब संधारित्र प्रत्यावर्ती धारा परिपथ में लगा होता है तब परिपथ में प्रत्यावर्ती वोल्टता, प्रत्यावर्ती धारा से $\frac{\pi}{2}$ पीछे रहती है। अर्थात् प्रत्यावर्ती धारा, प्रत्यावर्ती वोल्टता से 90° आगे रहती है।

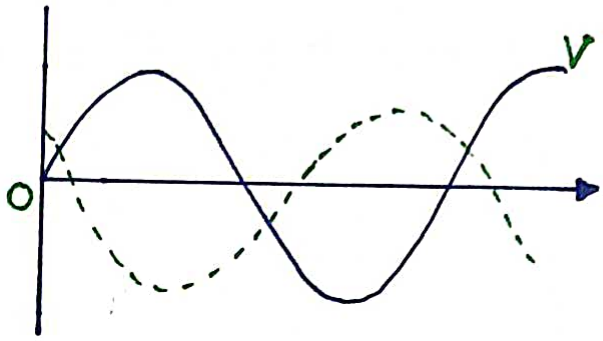

इस प्रकार प्रत्यावर्ती धारा तथा प्रत्यावर्ती वोल्टेज के समीकरण ;

प्रत्यावर्ती वोल्टता $V = V_m \sin\omega t$

प्रत्यावर्ती धारा $i = i_m \sin(\omega t + \pi/2)$

उक्त **समी.** को इस प्रकार से भी लिख सकते है।

$$V = V_m \sin(\omega t - \pi/2)$$

$$i = i_m \sin \omega t$$

दोनों समी॰ की तुलना करने पर,

$$i_m = \frac{V_m}{1/\omega C}$$

जहाँ i_m प्रत्यावर्ती धारा का शिखर मान है।

चूँकि $1/\omega C$ प्रतिरोध के समान ही है इसलिए इसे **संधारित्र प्रतिघात कहते** है।

इसे X_c से दर्शाया जाता है, तब

$$X_c = \frac{1}{\omega C}$$

जहाँ ω कोणीय वेग है जिसका मान $2\pi f$ होता है।

$$\boxed{X_c = \frac{1}{2\pi f C}}$$

संधारित्र का प्रयोग केवल प्रत्यावर्ती धारा में किया जाता है। संधारित्र का प्रयोग दिष्ट धारा में नहीं होता है। क्योंकि दिष्ट धारा की आवृत्ति शून्य होती है। एवं परिपथ में संधारित्र लगाने पर आवृत्ति का मान अनन्त हो जाता है। जिस कारण परिपथ खराब हो सकता है। अर्थात्

दिष्ट धारा के लिए आवृत्ति $f=0$ तब

$$\boxed{X_c = \infty}$$

श्रेणीबद्ध L-C-R परिपथ पर प्रयुक्त ac वोल्टता :-

जब किसी प्रत्यावर्ती L-C-R वैद्युत परिपथ में मुख्य धारा आरोपित वोल्टेज की कला में होती है अर्थात् प्रेरण-प्रतिघात (X_L), धारितीय प्रतिघात (X_c) के बराबर होता है, तो उस परिपथ को अनुनादी परिपथ कहते हैं।

श्रेणी अनुनादी परिपथ वह परिपथ है जिसमें आरोपित वोल्टेज की आवृत्ति परिपथ की स्वाभाविक आवृत्ति के बराबर होती है।

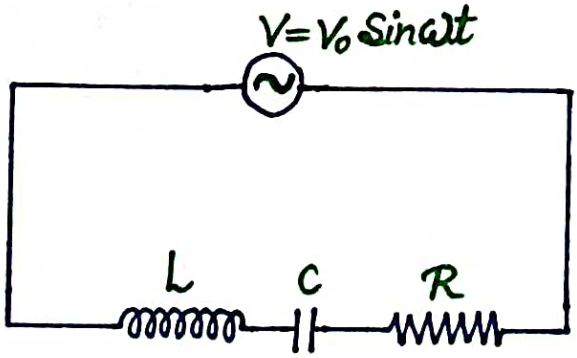

माना किसी प्रत्यावर्ती धारा-परिपथ में प्रेरकत्व L, धारिता C तथा प्रतिरोध R श्रेणीक्रम में जुड़े हैं तब परिपथ की प्रतिबाधा

$$Z=\sqrt{R^2+(X_L-X_C)^2} = \sqrt{R^2+\left(\omega L-\frac{1}{\omega C}\right)^2}$$

यदि आरोपित प्रत्यावर्ती वोल्टेज V तथा परिणामी धारा i के बीच कलान्तर ϕ हो, तो

$$\tan\phi = \frac{X_L-X_C}{R} = \frac{\omega L-\frac{1}{\omega C}}{R}$$

यदि परिपथ का प्रेरण-प्रतिघात, धारितीय प्रतिघात के बराबर हो, तब वोल्टेज V व धारा i समान कला में होगें। अतः परिपथ की प्रतिबाधा Z न्यूनतम $(=R)$ होगी तथा धारा $\left(i=\frac{V}{R}\right)$ अधिकतम होगी। यही अनुनाद की स्थिती है। अतः अनुनाद के लिए

$$X_L = X_C$$

$$\omega L = \frac{1}{\omega C}$$

$$\omega = \frac{1}{\sqrt{LC}}$$

$$\boxed{f=\frac{\omega}{2\pi} = \frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}}$$

जहाँ f आरोपित प्रत्यावर्ती वोल्टेज की आवृत्ति है।

यदि आरोपित वोल्टेज की आवृत्ति f तथा परिपथ की धारा i के मध्य ग्राफ बनाए तो $f=f_r$ के लिए धारा का मान अधिकतम (i_{max}) है, जहाँ $f_r\left(=\frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}\right)$ परिपथ की अनुनादी आवृत्ति है।

$f < f_r$ तथा $f > f_r$ दोनों ही दशाओं में धारा का मान अधिकतम मान से कम होता है।

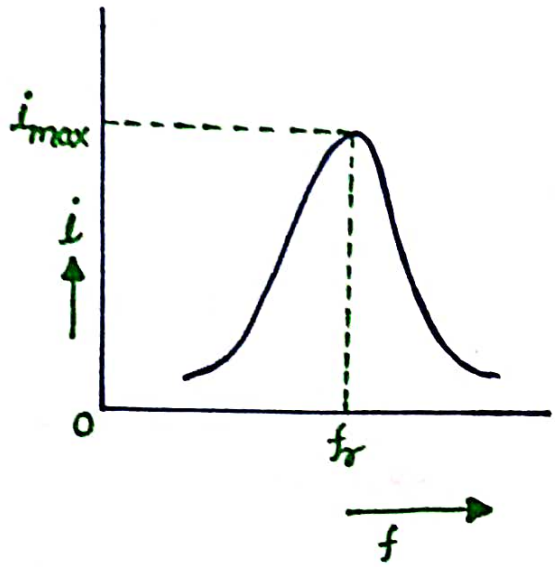

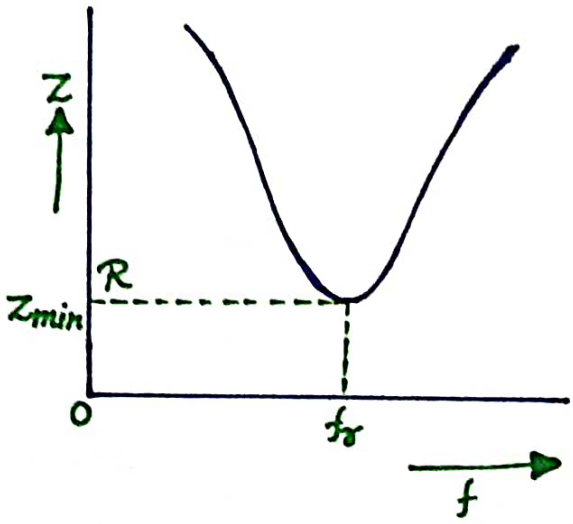

अतः

श्रेणी अनुनादी परिपथ से वोल्टेज-प्रवर्धन प्राप्त होता है। इसे 'वोल्टता अनुनादी' भी कहते हैं।

श्रेणी अनुनादी परिपथ की विशेषताएँ :—

(i) इसमें आरोपित प्रत्यावर्ती वोल्टेज V तथा परिणामी धारा i एक ही कला में होते हैं।

(ii) परिपथ की प्रतिबाधा Z न्यूनतम होती है तथा उसका मान परिपथ में लगे प्रतिरोध R के बराबर होता है।

(iii) परिपथ में धारा का मान अधिकतम होता है जो परिपथ के प्रतिरोध पर निर्भर करता है। $(i = i_{max} = V/R)$।

(iv) प्रेरकत्व L तथा धारिता C के सिरों के बीच उपलब्ध विभवान्तर, परिपथ पर आरोपित विभवान्तर से कहीं अधिक हो सकता है।

(v) परिपथ का प्रतिरोध (यदि प्रतिरोध अल्प है तो) उसकी अनुनादी आवृत्ति $f_r \left(= \frac{1}{2\pi\sqrt{LC}}\right)$ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता परन्तु प्रतिरोध बढ़ने पर उसकी अनुनादी धारा $i_{max} (= V/R)$ कम हो जाती है।

ac परिपथों में शक्ति : शक्ति गुणांक :—

हम जानते हैं कि श्रेणीबद्ध LCR परिपथ में प्रयुक्त कोई वोल्टता $V = V_m \sin\omega t$ इस परिपथ में धारा $i = i_m \sin(\omega t + \phi)$ प्रवाहित करती है यहाँ,

$$i_m = \frac{V_m}{Z} \quad \text{एवं} \quad \phi = \tan^{-1}\left(\frac{X_C - X_L}{R}\right)$$

इसलिए स्रोत द्वारा आपूर्त तात्क्षणिक शक्ति p है,

$$p = vi = (V_m \sin\omega t) \times [i_m \sin(\omega t + \phi)]$$

$$= \frac{V_m i_m}{2}[\cos\phi - \cos(2\omega t + \phi)]$$

एक पूर्ण चक्र में माध्य शक्ति उपयुक्त समी. के दाएँ पक्ष के दोनों पदों का माध्य लेने से प्राप्त हो सकती है। इनमें केवल दूसरा पद ही समय पर निर्भर करता है, और इसका माध्य शून्य है इसलिए,

$$P = \frac{V_m i_m}{2}\cos\phi = \frac{V_m}{\sqrt{2}}\frac{i_m}{\sqrt{2}}\cos\phi$$

$$P = VI\cos\phi$$

$$\boxed{P = I^2 Z\cos\phi}$$

अतः क्षयित माध्य शक्ति, न केवल वोल्टता एवं धारा पर निर्भर करती है बल्कि उनके बीच के कला-कोण की कोज्या पर भी निर्भर करती है। राशि $\cos\phi$ को शक्ति गुणांक कहा जाता है।

(i) प्रतिरोधकीय परिपथ :—

यदि परिपथ में केवल शुद्ध R है तो यह परिपथ प्रतिरोधकीय परिपथ कहलाता है। इस परिपथ के लिए $\phi = 0$, $\cos\phi = 1$ इसमें अधिकतम शक्ति क्षय होती है।

(ii) धारितीय परिपथ अथवा प्रेरकीय परिपथ :—

यदि परिपथ में केवल एक प्रेरक अथवा संधारित्र हो तो धारा एवं वोल्टता के बीच कला अंतर $\pi/2$ होता है इसलिए $\cos\phi = 0$ और परिपथ में धारा प्रवाहित होती है तो भी कोई शक्ति क्षय नहीं होती। इस धारा को कभी-कभी वाटहीन धारा भी कहते हैं।

LC दोलन :—

जब किसी आवेशित संधारित्र को किसी नगण्य ओमीय प्रतिरोध वाले प्रेरक में विसर्जित किया जाता है, तो परिपथ में वैद्युत दोलन होने लगते हैं।

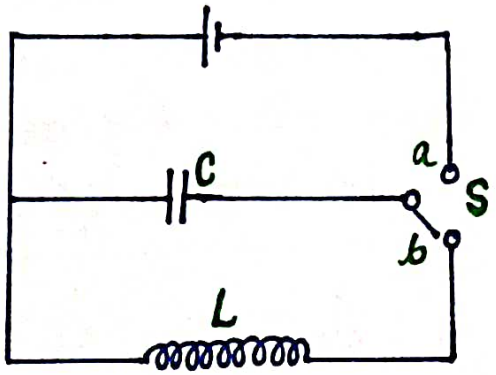

माना कि संधारित्र C तथा प्रतिरोध हीन प्रेरण-कुण्डली L एक बैटरी से जुड़ा है स्विच S का a से सम्पर्क करके संधारित्र को आवेशित करते हैं तथा फिर S का b से सम्पर्क करके संधारित्र को प्रेरण-कुण्डली L में विसर्जित होने देते हैं।

माना पूर्णतः आवेशित होने पर संधारित्र पर आवेश q_0 है। तब उसकी प्लेटों के बीच $\frac{1}{2}(q_0^2/C)$ ऊर्जा वैद्युत ऊर्जा के रूप में संचित रहती है। इस समय परिपथ में धारा शून्य है।

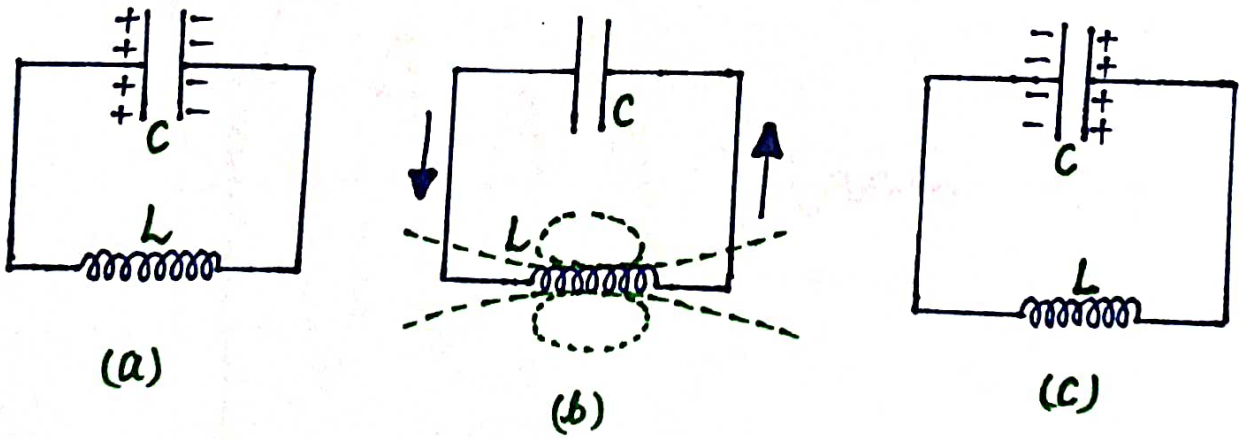

अब संधारित्र प्रेरण - कुण्डली L से जुड़ने पर विसर्जित होना प्रारम्भ हो जाता है, तो परिपथ में वामावर्त दिशा में धारा बहने लगती है जैसे ही धारा का मान शून्य से बढ़ना प्रारम्भ होता है, प्रेरकत्व L के चारों ओर चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न होने लगता है, और जब धारा अधिकतम मान i_0 पर पहुँच जाती है तब चुम्बकीय क्षेत्र के रूप में संचित ऊर्जा का मान $\frac{1}{2}Li_0^2$ होता है तथा संधारित्र पूर्णतः विसर्जित हो जाता है। इस प्रकार संधारित्र की प्लेटों के बीच वैद्युत क्षेत्र के रूप में संचित ऊर्जा, प्रेरकत्व में चुम्बकीय क्षेत्र के रूप में परिवर्तित हो जाती है। वैद्युत दोलनों की आवृत्ति संधारित्र की धारिता C तथा प्रेरकत्व L पर निर्भर करती है। यदि परिपथ का प्रतिरोध नगण्य हो, तो परिपथ में वैद्युत दोलनों की आवृत्ति

$$f = \frac{1}{2\pi}\sqrt{\frac{1}{LC}} = \frac{1}{2\pi}\sqrt{\frac{1/C}{L}}$$

परिपथ में वैद्युत दोलन अनन्त काल तक नहीं होते क्योंकि परिपथ में कुछ-न-कुछ प्रतिरोध होता ही है जिस कारण ऊर्जा ऊष्मा के रूप में क्षय होती रहती है। जैसे-जैसे ऊर्जा कम होती जाती है, दोलनों का आयाम घटता जाता है तथा अन्त में शून्य हो जाता है। ऐसी दोलनी धारा को अवमन्दित दोलनी धारा कहते हैं।

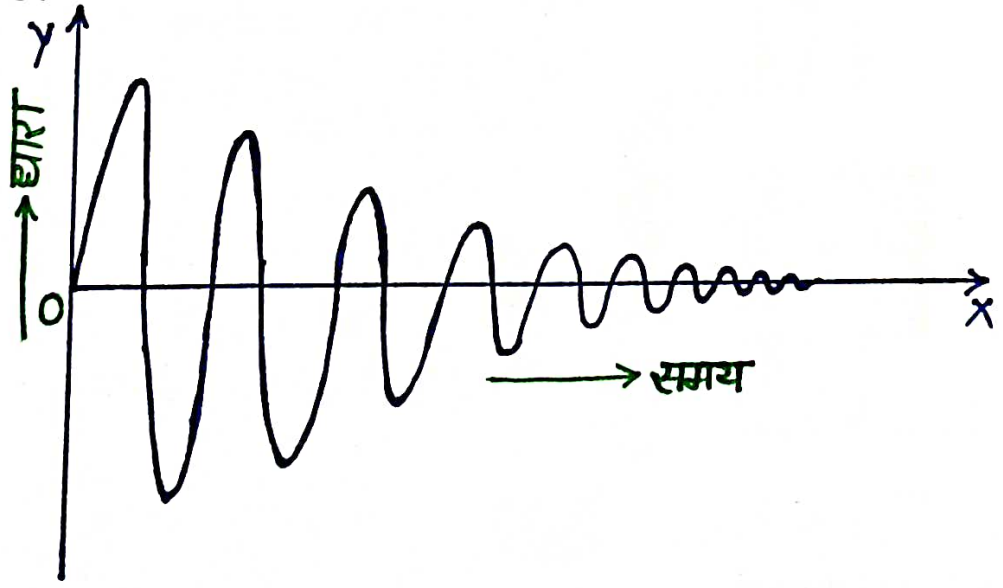

ट्रांसफॉर्मर :—

ट्रांसफॉर्मर अन्योन्य प्रेरण के सिद्धान्त पर कार्य करने वाला ऐसा साधन है जो प्रत्यावर्ती धारा के विभव को परिवर्तित करने के काम आता है। यह ऊँचे विभव वाली निर्बल प्रत्यावर्ती धारा को नीचे विभव वाली प्रबल वैद्युत धारा में, अथवा नीचे विभव वाली प्रबल प्रत्यावर्ती धारा को ऊँचे विभव वाली निर्बल वैद्युत धारा में बदलने के काम आता है। इसी के अनुसार ट्रांसफॉर्मर दो प्रकार के होते हैं ;

(i) अपचायी ट्रांसफॉर्मर

(ii) उच्चायी ट्रांसफॉर्मर

रचना:— इसमें नर्म लोहे की पत्तियों को एक के ऊपर एक रखकर बनाया गया एक आयताकार अथवा गोलाकार पटलित क्रोड होता है ये पत्तियाँ एक-दूसरे से पृथक्कृत रखी जाती हैं जिससे कि क्रोड में भँवर-धाराएँ कम उत्पन्न हों और वैद्युत ऊर्जा का ह्रास कम हो। इस क्रोड पर ताँबे ~~की तार~~ के तार की अलग-अलग दो कुण्डलियाँ लपेटी जाती हैं। ये कुण्डलियाँ एक-दूसरे से तथा लोहे की क्रोड से पृथक्कृत रखी जाती हैं। इन कुण्डलियों में से एक में ताँबे के मोटे तार के कम फेरे होते हैं। तथा दूसरी में ताँबे के पतले तार के अधिक फेरे होते हैं।

इनमें से एक को 'प्राथमिक कुण्डली' तथा दूसरी को 'द्वितीयक कुण्डली' कहते हैं। उच्चायी ट्रांसफॉर्मर में मोटे तार की कम फेरों वाली कुण्डली प्राथमिक होती है तथा पतले तार की अधिक फेरों वाली कुण्डली द्वितीयक होती है अपचायी ट्रांसफॉर्मर में इसके विपरीत होता है।

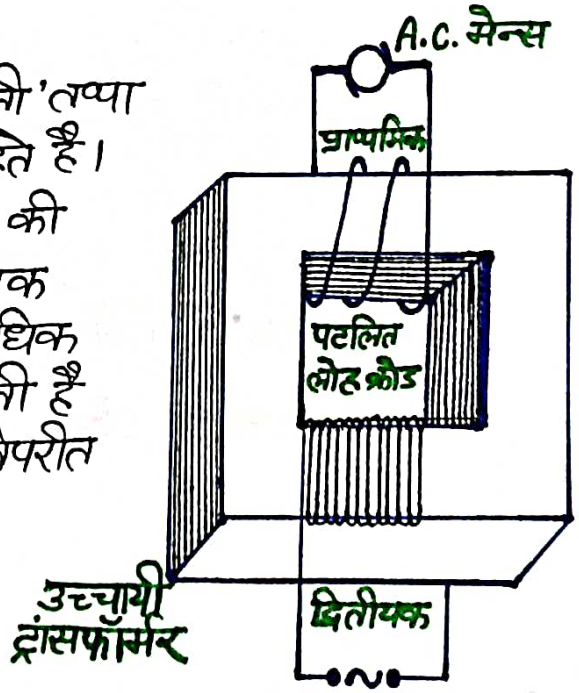

कार्य-विधि:- विद्युत वाहक बल के स्रोत को सदैव प्राथमिक कुण्डली में जोड़ते है। जब प्राथमिक कुण्डली में प्रत्यावर्ती धारा बहती है, तो धारा के प्रत्येक चक्र में क्रोड एक बार एक दिशा में चुम्बकित होती है तथा दूसरी बार दूसरी दिशा में।

अतः क्रोड के बार-बार चुम्बकन तथा विचुम्बकन होने से इस कुण्डली में को गुजरने वाले चुम्बकीय फ्लक्स में लगातार परिवर्तन होता रहता है।

माना प्राथमिक कुण्डली में तार के फेरों की संख्या N_p तथा द्वितीयक कुण्डली में N_s है और प्रत्येक फेरे से बद्ध चुम्बकीय फ्लक्स ϕ_B है।

फैराडे के विद्युत-चुम्बकीय प्रेरण के नियमानुसार, प्राथमिक कुण्डली में प्रेरित विद्युत वाहक बल

$$e_p = -N_p \frac{\Delta \phi_B}{\Delta t}$$

तथा द्वितीयक कुण्डली में प्रेरित विद्युत वाहक बल

$$e_s = -N_s \frac{\Delta \phi_B}{\Delta t}$$

अतः

$$\boxed{\frac{e_s}{e_p} = \frac{N_s}{N_p}}$$

आदर्श परिस्थिति में,

$$\frac{V_s}{V_p} = \frac{e_s}{e_p} = \frac{N_s}{N_p} = \gamma$$

जहाँ, γ = परिणमन अनुपात

V_p = प्राथमिक कुण्डली के सिरों के बीच विभवान्तर

V_s = द्वितीयक कुण्डली के सिरों के बीच विभवान्तर

ट्रांसफॉर्मर द्वारा विद्युत वाहक बल में परिवर्तन होने पर धारा की प्रबलता में भी उसी अनुपात में विपरित परिवर्तन हो जाता है। अर्थात् विद्युत वाहक बल के बढ़ने पर धारा घट जाती है।

ट्रांसफार्मर में ऊर्जा की हानियाँ:—

ट्रांसफॉर्मर में ऊर्जा की अनेक प्रकार की हानियाँ होती हैं।

(i) ताँबे में हानि
(ii) भँवर - धाराओं में हानि
(iii) शैथिल्य हानि
(iv) फ्लक्स हानि